पद्य-पयोनिधि

ओ३म्

पद्य-पयोनिधि

HINDUSTANI ACADEMY
Hindi Section
Acc. No. 1709
Date of Receipt 18/12/...

रचयिता

श्री विद्याभूषण 'विभु'

प्रकाशक

कला कार्य्यालय

प्रयाग

विजयादशमी

प्रथम बार] सम्वत् १९८० वि० [मूल्य ॥)

ओ३म्

उपहार

श्री _____

_____

_____

कला कार्य्यालय से प्रकाशित पुस्तकें ।

ओ३म्।

बहलाने तथा हँसानेवाली कहानियाँ

यह माला सरस, सरल पद्यों में सस्ते मूल्य पर निकाली गई है। रंग-बिरंगे १५ या २० चित्रों से चित्रित है। खिलाड़ी बच्चों को पढ़ानेवाली है। शिक्षा से सम्पूर्ण है। रोते को हँसाती है। प्रत्येक पुस्तक ६८ पृष्ठ की। मूल्य चार आना।

(१) ढपोरशंख तथा अन्य कहानियाँ (तय्यार है)

(२) गोबरगनेस तथा अन्य कहानियाँ (शीघ्र छपेगी)

(३) लाल बुझक्कड़ तथा अन्य कहानियाँ (शीघ्र छपेगी)

(४) शेखचिल्ली तथा अन्य कहानियाँ (शीघ्र छपेगी)

मिट्टी के ये नहीं खिलौने, जो गिरते ही टूटेंगे।
जो जितना ही अधिक पढ़ेंगे, उतना ही रस लूटेंगे॥

मिलने का पता—

—कला कार्य्यालय

प्रयाग।

कला कार्य्यालय से प्रकाशित पुस्तकें।

१—सुहराब और रुस्तम—करुण रस का उत्कृष्ट उदाहरण। वज्र हृदयी भी पढ़कर द्रवीभूत हो जायगा। रचयिता कविवर श्री विद्याभूषण जी 'विभु'। मूल्य ।)

२—ढपोरशङ्ख तथा अन्य कहानियाँ—सरल, तथा सरस पद्यों में सचित्र कहानियों का संग्रह। हास्यरस की पिटारी है। पढ़िये और हँसिये। बच्चे तो देखते ही दौड़ेंगे। रचयिता 'विभु' जी। मूल्य ।)

३—ब्रह्म-विज्ञान—(ईश तथा श्वेताश्वतर उपनिषदों का पद्यानुवाद) सुन्दर तथा ललित भाषा में रचा गया है। अपने विषय की अपूर्व पुस्तक। रचयिता श्री सत्यप्रकाश जी विशारद। मूल्य केवल =)

मिलने का पता —

कला कार्य्यालय,

प्रयाग।

ओ३म्।

बहलाने तथा हँसानेवाली कहानियाँ

यह माला सरस, सरल पद्यों में सस्ते मूल्य पर निकाली गई है। रंग-बिरंगे १५ या २० चित्रों से चित्रित है। खिलाड़ी बच्चों को पढ़ानेवाली है। शिक्षा से सम्पूर्ण है। रोते को हँसाती है। प्रत्येक पुस्तक ६४ पृष्ठ की। मूल्य चार आना।

(१) ढपोरशंख तथा अन्य कहानियाँ (तय्यार है)

(२) गोबरगनेस तथा अन्य कहानियाँ (शीघ्र छपेगी)

(३) लाल बुझक्कड़ तथा अन्य कहानियाँ (शीघ्र छपेगी)

(४) शेखचिल्ली तथा अन्य कहानियाँ (शीघ्र छपेगी)

मिट्टी के ये नहीं खिलौने, जो गिरते ही टूटेंगे।
जो जितना ही अधिक पढ़ेंगे, उतना ही रस लूटेंगे॥

मिलने का पता—

—कला कार्यालय

प्रयाग।

ओ३म्

निवेदन

साहित्य एक नवीन सृष्टि है, यह स्वय एक सागर है, यह एक क्षेत्र है एक मनोहर ललित सुखद उपवन है। कविता साहित्य का प्राण है ससार की सजीवनी शक्ति है, सागर का अनमोल रत्न है, क्षेत्र का जीवन है, उपवन का सुन्दर रुचिर, सुग ध सयुक्त सुमन है, गगन का चन्द्र है, सर का सरोज है, चन्द्र की ज्योत्स्ना है।

प्राण का निरन्तर चलना ही जीवन चिह्न है, शक्ति का विकास होना ही उन्नति का प्रदर्शक है, नवीन रत्नों का प्रकट होना ही शोभा है, नूतन पुष्पो का प्रतिदिन विकसित होना ही उपवन के हरे भरे रहने का प्रमाण है, नये नये कमलों के नित्य खिलने से ही सर का सौन्दर्य्य स्थित है। नई नई कविताओ का नये रूप मे अवतरण होना ही काव्य क जीवन का चिह्न है, साहित्य की शोभा है, अमरत्व के लक्षण है।

बस, इसी उद्देश्य से "पद्य पयोनिधि' की रचना हुई है और यही लक्ष्य सम्मुख रख के यह प्रकाशित भी किया जा रहा है। यदि इस पयोनिधि के रत्न सुखद हुए तब तो कोई बात ही नहीं अन्यथा फल होने पर भी हमें सन्तुष्टि ही होगी क्योकि जहाँ सुगन्धित सौम्य, सुखद गुलाब है, वहाँ उसके काटे भी जीवन के हेतु आवश्यक है जहाँ कमल है वहाँ पङ्क ही तो कमल का आधार है, अग्नि के साथ धूम्र रहता ही है।

इस पयोनिधि को उपस्थित करते समय हम अपने सह योगी सम्पादका के प्रति कृतज्ञता प्रकट किये बिना भी नही रह सकते जिनकी पत्रिकाओ म से कुछ पद्य सग्रह कर के प्रस्तुत किये गये है। श्रीयुक्त विश्वप्रकाश जी विशारद ना धन्यवाद के पात्र है हा जिन्होने अविरल परिश्रम करक हमारे सामने यह सामग्री उपस्थित की है।

हमे पूर्ण आशा है कि साहित्य के प्रेमी, बालको तथा विद्यार्थियो के लिये तो यह ग्रन्थ विशेष हितकर होगा। कारण, इससे जहाँ विद्यार्थियो को भक्ति रस के अनूठे उदाहरण मिलेगे, वहा नैसर्गिक दृश्य के विचित्र प्रसग अपनी निराली छटा लिये हुए पाठको को आकर्षित कर रहे है, ऋतुओं का वैचित्र्य, नदियो का सौन्दर्य्य, लताओ का लालित्य सब के चित्र चित्रण कवि की प्रभा के प्रदर्शक है। जहा स्वतत्रता की गज है, राष्ट्रीयता का राग है, देशभक्ति का दृश्य है वहाँ तो शरीर रोमाञ्चित हो ही आयेगा। ऐतिहासिक पुरुषा के चरित्र चित्रण जीवन की कसौटी है। त्याग भी चित्ताकर्षक है। इसी प्रकार ललित कवितायें एक से एक उत्तम और लाभदायक है। भाषा ऐसी सुन्दर है कि सोने मे सुगधि का काम करती है। विद्यार्थीगण को भाषा का विशेष परिज्ञान प्राप्त हो सकता है। उनकी कठिनता दूर करने के हेतु कही २ टिप्पणियाँ दे देने से कारण पुस्तक और भी लाभदायक हो गई है।

हमे तो पूर्ण आशा है कि यह पुस्तक अपने उद्देश्य मे असफल न रहेगी।

—प्रकाशक

विषय सूचा

प्रथम तरग—भक्ति—	पृष्ठ
१–कवि कीतन	१
२–प्रभु प्रताप	२
३–विनय	७
४–विभु वैभव	७
५–पञ्चदान	८
द्वितीय तरग—नैसगिक—	
१–चन्द्रचन्द्रिका	१०
२–तारे	११
३–उषा	१३
४–वसत	१४
५–निदाघ	१७
६–पावस	१९
७–बालक और नदी	२१
८–निर्गंध फूल	२२
९–विन्दु विनोद	२३
१०–प्रसून प्रलाप	२४
११–गेंदे के फूल	२५
१२–निशा मे माधवी लता का दृश्य	२६
१३–करोदा कुसुम	२६
१४–वट बोध	२७
१५–अमर बेलि	२८
तृतीय तरंग—राष्ट्रीय—	
१–राष्ट्रीयगीत	२९
२–मातृभूमि	३०
३–घर	३१

पृष्ठ

४–स्वतत्रता ३२

५–स्वतत्रता स्वागत ३३

चतुर्थ तरग–ऐतिहासिक—

१–जयसिह के प्रति शिवाजी का पत्र ३५

२–देवलोक की दिवाली ४४

३–वैदिक बलिदान ४७

४–महमूद की मृत्यु ४६

५–प्रह्लाद प्रतिज्ञा ५३

पचम तरग–स्फुट—

१–कविते ! तेरा वास कहाँ ! ५५

२–योगि राज-उलूक ५६

३–चद्र और जुगनू ५६

४–उद्देश्य ५९

५ आशे ! ६०

६–बाल्य स्मृति ६१

७–परोपकार ६५

८–सूर ६६

९–धर्मदर्शक ६७

१०–चिता के फल ६८

११–कवि कौतुक ७०

१२–समालोचक समीक्षा ७०

१३–सम्पादक स्वत्व ७१

१४–भात की पडी ७२

१५–फूलने का फल यही ससार म । ८१

१६–कौन जन महिमा के अधिकारी ! ८३

१७–[illegible]

ओ३म्

पद्यपयोनिधि

प्रथम तरंग

(भक्ति विषयक)

कवि-कीर्तन ।

'कविर्मनीषी परिभू स्वयभू' *

विभो ! तुझे ही श्रुति ने कहा है ।
अहो महातेज महेश तेरा,
विराजता है बन विश्वव्यापी ॥ १ ॥

अलकृता है तव वेद-वाणी
सुभूषणो से मन मोहती है ।
न छुद पाते तव मत्र के से,
भरे हुए है रस से निराले ॥ २ ॥

सदा हमारा मन शोधती है,
बडी अनोखी तव देव ! शिक्षा ।
परम्परा से प्रतिपालती है,
दया तुम्हारी अयि दीनबधो ! ॥ ३ ॥

*

मिले न कोई उपमा तुम्हारी,
सुधी विचारे सब ढूँढ हारे।
सरस्वती के अधिराज-राजा,
जगन्नियन्ता जगदेक स्वामी ॥ ४ ॥

प्रसन्नता से जड जीव सारे,
कवीन्द्र ! तेरे गुण गा रहे हैं।
सदा सहारे शशि भानु तारे,
हरे ! हमारे जय प्राण प्यारे ॥ ५ ॥

कवे ! कृपालो ! करुणा करो 'जो,
अदोष होवे कविता हमारी।
अपूर्ण हो पूर्ण लगे अनूठी,
प्रकाश पावे इव अशुमाली[1] ॥ ६ ॥

प्रभु-प्रताप

सर्वेश आनन्द दातार तू।
कल्याणकारी गुणागार तू ॥
स्रष्टा अहो तू निराकार है।
सर्वत्र तेरा चमत्कार है ॥ १ ॥

गो कल्पनातीत[2] तू पास है।
जाने न तो भी कहाँ बास है ॥
ओंकार, ज्ञाता, निराधार है।
सर्वत्र तेरा चमत्कार है ॥ २ ॥

फैला हुआ इन्द्र का चाप है।
सातो रँगो की लगी छाप है॥
तारो भरा व्योम विस्तार है।
सर्वत्र तेरा चमत्कार है॥ ३॥

देता पका अन्न जो लोक को।
फैला रहा दिव्य आलोक को॥
चडाशु[१] जाज्वल्य[२] अगार है।
सवत्र तेरा चमत्कार है॥ ४॥

राकेश की चन्द्रिका व्याप्त है।
बूटी जडी को रसप्राप्त है॥
वर्षा रहा क्या सुधा-सार है।
सर्वत्र तेरा चमत्कार है॥ ५॥

विद्युत्-प्रभा की कहीं है छटा।
छाई हुई घोर काली घटा॥
कादम्बिनी[३] की पयोधार है।
सर्वत्र तेरा चमत्कार है॥ ६॥

मोती बना सीपियो में दिये।
मूँगे तथा शख पैदा किये॥
रत्नादि-दाता अकूपार[४] है।
सर्वत्र तेरा चमत्कार है॥ ७॥

---

१ सूर्य। २ दहकता। ३ मेघमाला। ४ समुद्र।

राजा कहीं है, कहीं रंक है।
सूखा कहीं है, कहीं पंक है॥
वैचित्र्य सम्पन्न ससार है।
सर्वत्र तेरा चमत्कार है॥ ८॥

कोई यहाँ हर्ष से सो रहा।
कोई यहाँ क्लेश से रो रहा॥
उत्पत्ति वार्धक्य-सहार है।
सर्वत्र तेरा चमत्कार है॥ ९॥

गाते तरगान्विता कूल है।
नाना रँगो के खिले फूल है॥
कल्लोलिनी[1]-कठ का हार है।
सर्वत्र तेरा चमत्कार है॥ १०॥

पीते जिसे निर्धनी भूप है।
तूने अनेको दिये रूप है॥
पानी, घटा, बर्फ, नीहार[2] है।
सवत्र तेरा चमत्कार है॥ ११॥

आवास नीला किलोले करें।
शोभा जहाँ हस दूनी भरें॥
कजों भरा मजु कासार है।
सर्वत्र तेरा चमत्कार है॥ १२॥

आती सदा और जाती रहे।
जो जीव-दानी बढाती रहे॥
कैसी हवा जीवनाधार है।
सर्वत्र तेरा चमत्कार है॥ १३॥

सारग शार्दूल[1] मातग हे।
झखाड से मार्ग भी तग हे॥
भी—कटकाकीर्णकातार[2] है।
सर्वत्र तेरा चमत्कार है॥ १४॥

चोटी हिमाच्छन्न ऊची बडी।
घेरे हरी घास लम्बी खडी॥
सोता बहा गोत्र[3] -उद्गार है।
सर्वत्र तेरा चमत्कार है॥ १५॥

भू उवरा है विछाई यहाँ।
हो प्राणियो का सहारा जहाँ॥
शस्याढ्य[4] सम्पूर्ण केदार[5] हे।
सर्वत्र तेरा चमत्कार है॥ १६॥

भू मे गिरा बीज छोटा कहीं।
भेजा उसे धूप पानी वहीं॥
पौधा बना पर्वताकार है।
सर्वत्र तेरा चमत्कार है॥ १७॥

---

१ व्याघ्र। २ डर और काटों से युक्त बन। ३ पवत। ४ अन्न से ढका हुआ। ५ खेत।

केकी शुको शारिका बोलियाँ।
कस्तूरिका-एण की टोलियाँ॥
पक्षी मृगों का समाहार है।
सर्वत्र तेरा चमत्कार है॥ १८॥

कैसी अनोखी करामात है।
आती नहीं ध्यान म बान है॥
काया बनी मुक्ति का द्वार है।
सर्वत्र तेरा चमत्कार है॥ १९॥

गो भैंस को दूध तूने दिया।
मीठा बनासा मिला के पिया॥
कीलाल[1] सा दुग्ध आहार है।
सवत्र तेरा चमत्कार है॥ २०॥

केले करोदे कहीं बेर हैं।
मेवे तथा आम के ढेर हैं॥
स्वादिष्ट कैसा फलाहार है।
सर्वत्र तेरा चमत्कार है॥ २१॥

टूटा न तेरा कहीं तार है।
तेरे बिना सर्व निस्सार है॥
मेरा तुझे ही नमस्कार है।
सर्वत्र तेरा चमत्कार है॥ २२॥

---

१ देवताओं का पय।

विनय ।

वरदो, करदो नाथ ! शक्ति तन तन मे भरदो
धरदो अपना हाथ, प्रेम जन जन मे करदो ।
हर ! दो हम को ज्ञान, ध्यान शुभ विश्वम्भर ! दो
दरदो दुख दारिद्रय, छिद्र छल छिन मे छरदो ।
नित भाषा भूषा देशका ध्यान रहे, सम्मान हो
प्रभु कर जोडे हम माँगते इतना तेरा दान हो ।

विभु—वैभव ।

करतार कृपा नित करते हो ।
हर दु ख सर्वदा हरते हो ॥

भूखो की क्षुधा बुझाते हो । प्यासो को तोय पिलाते हो ॥
रोगी का रोग मिटाते हो । पीडित का पिंड छुडाते हो ॥१

करतार कृपा! नित करते हो ।
हर दु ख सर्वदा हरते हो ॥

अधे को तेज दिखाते हो । लँगडे से राह चलाते हो ॥
बहिरे को बात सुनाते हो । गूँगे से गीत गवाते हो ॥२

करतार कृपा नित करते हो ।
हर दु ख सर्वदा हरते हो ॥

जीवन जीवन[१] तुम मीनो के। रक्षक अनाथ अति दीनो के ॥
अघनाशक आप मलीनो के। प्रभु पारस हो धनहीनो के ॥३॥

करतार कृपा नित करते हो।
हर दुःख सर्वदा हरते हो॥

जो शरण आपकी आता है। जग-ताप न उसे सताता है ॥
भवसागर से तर जाता है। इस जीवन का फल पाता है॥८॥

पञ्च दान ।

जिस पर सब प्राणी चलते हैं।
जिस पर अन्न फूल फलते हैं॥
सारे रत्नो की जो खान।
वह धरती दी प्रभु ने दान॥ १ ॥

जिसको पी कर सब जीते हैं।
जिसके बिना सिन्धु रीते हैं॥
जिससे होते हैं बलवान।
हरि ने दिया वही जल दान ॥ २॥

जिससे बादल बन जाते हैं ॥
सर्दी से बच तन जाते हैं ॥
पके खेत में जिससे धान।
वह की हरि ने अग्नि प्रदान ॥ ३ ॥

---

१ जल।

जिसमे बातचीत करते हैं।
जिसमे पशुपक्षी चरते हैं॥
जिसमे उडते फिरे विमान।
दिया गगन वह हरि ने दान॥ ४॥

जिससे श्वास सदा आता है।
गध दूर से जो लाता है॥
बचते जिससे सब के प्रान।
किया पिता ने पवन प्रदान॥ ५।

द्वितीय तरंग ।

(नैसर्गिक)

चन्द्रचन्द्रिका ।

अस्त रवि-आभा हुई सित कौमुदी खिलने लगी ।
शर्वरी मानो विहँस निज नाथ से मिलने लगी ॥
या सुधाधर ने धरा पर कुछ बहाई है सुधा ।
हो अमर पीकर जिसे नर शान्त हो जग की क्षुधा ॥ १ ॥

* * * *

पद्मिनी मुँह खोल कर सर मे सुरस पीने लगी ।
चन्द्रिका-चाहक चकोरी चाव से जीने लगी ॥
सत का हरि निरत मन शुभ मोद से सत्वर भरा ।
अशुमाली ने अचानक चन्द्र का गौरव हरा ॥ २ ॥

* * * *

पुष्प नभ-उद्यान का सब से अनोखा अति भला ।
क्या हुआ मुरझा गया या नोचकर उसको मला ॥
सुख सुना है इस जगत में बस दुखो का ढेर है ।
'चार दिन की चाँदनी है फिर वही अधेर है' ॥ ३ ॥

तारे ।

चमक रहे है ऊपर तारे ।
झिलमिल झिलमिल करते सारे ॥
नहीं गगन के दीपक प्यारे ।
नहीं आग के ये अगारे ॥ १ ॥
कही न आतिशबाजी छूटी ।
जो जाकर ऊपर ही फूटी ॥
नहीं चमकने फूल खिले है ।
नीली साडी पर न सिले है ॥ २ ॥
नहीं किसी ने लाल विछाये ।
मोती नहीं वहाँ फैलाये ॥
सागर के भी नही झाग है ।
नीली चिडियों के न दाग हैं ॥ ३ ॥
पके फलो का बाग नहीं है ।
मणियो वाला नाग नही है ॥
देवो की ये आँख नहीं हैं ।
झाँक रही जो कहीं कहीं हैं ॥ ४ ॥
आसमान के नहीं साल[१] हैं ।
कुछ छोटे हैं, कुछ विशाल हैं ॥
कहीं दूर हैं, कहीं पास हैं ।
कुछ उज्वल हैं, कुछ उदास हैं ॥ ५ ॥

---

१ सुराख ।

कोई धरती पास पडा है ।
कोई जाकर दूर खडा है ॥
कुछ चचल फिरते चकफेरे ।
कुछ रहते अपना थल घेरे ॥ ६ ॥

कोई कभी न गिन सकता है ।
नहा किसी से छिन सकता हे ॥
सदा रात म ही हॅसते हे ।
लाखो मे प्राणी बसते हे ॥ ७ ॥

ईश्वर ने यह लोक बनाये ।
बिना सहारे ही लटकाये ॥
छोटे बड अनेको तारे ।
सब उसकी आँखा के तारे ॥ ८ ॥

* * *

उडु[१] नही ये उड रहे नभ मे विहग चकोर हे ।
पान करने चन्द्रिका का जा रहे शशि ओर हे ॥
चन्द्रमणि के या चुराने को निशा के चोर हे ।
व्योम अहि के या निगलने को निराले मोर हे ॥

---

१ तारे ।

उषा ।

ऊषे ! देख लालिमा तेरी ।
होती दूर कालिमा मेरी ॥
अरुणोदय का हुआ आगमन अरुणशिखा का गान ।
रवि का स्वागत नित करती है ।
आभा से जग को भरती है ॥
पुलकित प्राणी नवजीवन पा भजते हैं भगवान ॥ १ ॥
वासित मलयानिल बहता है ।
मन प्रसन्न करता रहता है ॥
नन की सब पीडा हरता है, करना है बलवान ।
खग डालो पर कूँज रहे है ।
भृग कोष पर गुँज रहे है ॥
मुखरित करते हैं कानन को सुना कलित कलतान ॥२॥
भानु किरण जाने क्या बोली ।
अपनी आँख कज ने खोली ॥
जिसका निशि मे ध्यान किया है वही सामने मित्र[१] ।
सरिता झील-सरोवर वन[२] मे ।
पुष्प खिले हैं बन उपवन में ॥
चारों ओर प्रकृति हँसती है शोभा बडी विचित्र ॥३॥
ऊषे ! फाग कहाँ खेली है ।
चामुडा की या चेली है ॥

---

१ सख्य । २ जल ।

पीकर रुधिर निशाचर गण का वदन हुआ है लाल ।
पडा हुआ शय्या पर सोता ।
तूने जो न जगाया होता ॥
नित्य कर्म का ध्यान दिलाती मुझे उठा तत्काल ॥ ८ ॥

वसत ।

अवनि पर आ पहुँचा ऋतुराज ।
साजकर अपना सकल समाज ॥
सौम्यता सुषमा का सिरताज ।
अनोखी छवि विराजती आज ॥ १ ॥
सृष्टि की शोभा का शृगार ।
हृदयतत्री की कल झनकार ॥
अलौकिक लीला का अवतार ।
रसिक जन के विनोद का सार ॥ २ ॥
वसती वसुधा है सवत्र ।
लुभाता मन को पीला छत्र ॥
सत्र[१] से पूरित पादपपत्र ।
गगन मे मगन बडे नक्षत्र ॥ ३ ॥

---

१ दान, भेंट ।

बह रहा शीतल सुखद समीर।
सुरभि से युक्त और गभीर॥
कहीं छू जाता तनिक शरीर।
दूर सब करता क्षण मे पीर॥ ४॥

मजरी-मडित मजु-रसाल।
पुष्पपल्लवयुत पादपडाल॥
प्रेम पथ प्रेरक परम प्रियाल।
प्रफुल्लित पद्म निवेषित[1] ताल॥ ५॥

जा रहे कुसुमो पर मकरद[2]।
पान करते है मधु मकरद[3]॥
विचरते जो है नित स्वच्छद।
न होता क्यो उनको आनन्द॥ ६॥

पिको का पचम स्वर में राग।
हृदय मे उपजाता अनुराग॥
छिडकते गध चतुर्दिक् बाग।
खेलते है वसत मे फाग॥ ७॥

मत्त मधुकर की मृदु गुजार।
मदन[4] की मुरली के उद्गार॥
मनोमोहक माया के तार।
विश्व के विजय हेतु विष्फार[5]॥ ८॥

---

१ भरा हुआ। २ भौंरा। ३ रस। ४ बसत कामदेव। ५ धनु की टकार।

कर ध्वनि चातक कहीं चकोर।
चुराते चित्त चन्द्रिका चोर॥

पपीहा की पी पी का शोर।
कहीं पर केका करते मोर॥ ९॥

अधमुकुलित कलिका कचनार।
पद्मरागों से लगे अनार॥

शाल्मली का अद्भुत शृगार।
अनेको लटकाये अगार॥ १०॥

हुये क्यो लोहित वर्ण पलाश।
आग से बचे न उनकी लाश॥

न मिलती जिससे कुछ भी वास।
न जाता कोई उसके पास॥ ११॥

प्रकृति ने पहना नया लिवास।
आ रहा मलयानिल ले बास॥

उर्वरा उर्वी का उल्लास।
पुष्प वर्षा का अति आभास॥ १२॥

कहीं पर सरसो और कसूम।
कहीं यव रहे पवन से झूम॥

क्षेत्र में चना और गोधूम।
मची है कृषक धाम में धूम॥१३॥

लोक में फैला सूर्य्यालोक ।
कोकनद[१] विकसित विहॅसित कोक[२] ॥
शोक हरता है खडा अशोक।
ओक[३] में बैठा गाता ओक[४] ॥ १४ ॥

मल्लिका – जाती – जुही – लवग ।
प्रफुल्लित लता अग प्रत्यग ॥
लहलही लवली – लतिका – रग ।
कर रहा आकर्षित सारग ॥ १५ ॥

निदाघ ।

कहीं लू लपट है।
बवडर झपट है॥
भरी आग घट है।
कि भट्टी निकट है ॥ १ ॥

कही भू भभक है।
चिलकती चमक है॥
दहकती धधक है।
कि काली कटक है ॥ २ ॥

अनिल में अनल है।
दिलों में दहल है॥
किसी को न कल है।
कहें जान जल है॥ ३ ॥

---

१ कमल। २ चकवा। ३ घर। ४ पक्षी।

हरिण हाँपते हैं।
कमठ काँपत हैं॥
जलधि नापते हैं।
न जल के पते हैं॥ ४॥

मदन का दहन है।
कि जलता गहन है॥
अगिन का वहन है।
न होता सहन है॥ ५॥

बडी धूल जलती।
उबलती उछलती॥
अवनि या पिघलती।
अँगारे उगलती॥ ६॥

बहुत डर समाया।
छिपी वृक्ष छाया॥
तरणि ने तपाया।
जगत को जलाया॥ ७॥

पवन चल रहे हैं।
विजन झल रहे हैं॥
छिडक जल रहे हैं।
तदपि जल रहे हैं॥ ८॥

पावस ।

बच्चो ! यह वर्षा ऋतु आई । संग बादलों के दल लाई ॥
सूरज छिपा तपाने वाला । ऐसे हो खल का मुँह काला ॥१॥
धीरे धीरे बढा अंधेरा । आसमान मेघो ने घेरा ॥
देता गडगड शब्द सुनाई । गडबड उसने यहाँ मचाई ॥२॥
लगे दौडकर सभी उठाने । बाहर की सब चीज बचाने ॥
टपटप लगीं टपकने बूँदे । धरती को टापों से खूँदें ॥३॥
बूँदों ही में बच्चू झपटा । गिरा धडाम पैर जो रपटा ॥
हँसे जोर से सब दे ताली । ला, ला, दे जो चीज उठाली ॥४॥
वर्षा ने अतिधूम मचाई । धरती की सब प्यास बुझाई ॥
आज धूल की धूल उडी है । पता नहीं क्या मूल उडी है ॥५॥
कीचड ने ऐसी अड पकडी । सिर होती मारें जो लकडी ॥
पानी ने भी रँग बदला है । हुआ नीच मिल सब गँदला है ॥६॥
दल दल का दिल काँप रहा है । हिलता मानो हाँप रहा है ॥
थल भी जलमय आज हुआ है । पानी का ही राज हुआ है ॥७॥
चले अकड कर लघु नद नाले । सागर बने नीर के प्याले ॥
पहले जहाँ पैर से जाते । वहाँ बैठ अब नाव चलाते ॥८॥
धनुष अनोखा तान लिया है । सब ने उसको जान लिया है ॥
बिजली ऊपर कडक रही है । भैंस हमारी भडक रही है ॥९॥
कोंदा खाती बिजली लपके । बच्चे भागे कहीं न गपके ॥
गाय भैंस पोखर में लोटें । आस पास की घास खसोटें ॥१०॥

कहीं तेरना सीख रहे हैं। कहीं नहाते दीख रहे हैं॥
जलचर सब आनन्द मनाते। जल-लोभी मेढक टर्राते ॥११॥
चातक की यह चाल बुरी है। इसके डर से स्वाँति दुरी है॥
पी पी करे न पीता पानी। भाग्यहीन की यही निशानी ॥१२॥
शोर मोर भी मचा रहा है। मन को मेरे नचा रहा है॥
बगुला भक्तों की बन आई। धूम दिवाली की सी छाई ॥ १३ ॥
देख अनीति हस ये भागे। बुरा राज सब कोई त्यागे॥
कहीं मेढकी कुदक रही है। मानो चिडिया फुदक रही है॥१४॥
कहीं केंचुए घिसट रहे हैं। कुँडली मारे सिमट रहे हैं॥
पडे,पक में कुचला तन है। थोडा सा इनका जीवन है ॥१५॥
कहीं झुड की झुड गिजाईं। वर्षा से मिलने को आइ।
पडी खेत में वीरबहूटीं। लडको ने ले लेकर लूटीं ॥१६॥
लाल किसी ने तोड गिराये। या मखमल के फश बिछाये।
बरसाती कीडे परवाले। उडते ही उडते खा डाले ॥१७॥
बहुतो के पर झडे पडे हैं। झेल रहे दुख बडे कडे हैं।
कहीं झीगुरों की झनकारें। जुगनू की चमकती कतारें ॥१८॥
खाता है जब पवन झकोरे। लेता है तब नीर हिलोरे
हल से जोत मगन मन होते। बीज किसान खेत में बोते॥१९
देखो जिधर हरी हरियाली। सब के मन को हरनेवाली
बेल बढी पेडों पर छाई। बडी अनोखी कुज बनाई ॥२०
कोष मका का निकल रहा है। जल के मोती निगल रहा है
आम जामुनें और निबोली। पकी पकी से भरली झोली॥२१

झूलों पर खात जाते है। राग मधुर गात जाते हैं॥
दे सब के जीवन हित पानी। प्रभु ने भेजी वर्षा रानी ॥२२॥

(शिशु)

बालक और नदी।

बालक–"बता मुझे हे प्यारी सरिता, तूने कहाँ किया प्रस्थान।
धीरे धीरे क्यो जाती है, शोकभरा क्या तेरा गान ?"

नदी—"वर्षा की बौछारें दाई, गिरि है मेरा जन्मस्थान।
सोता बना हिँडोला मेरा, वन पुष्पों ने छाई छान॥
चचल चपल खेलती फिरती, एक दिवस मै प्रात काल।
बढी उधर को जल्दी जल्दी, जिधर मिला पर्वत का ढाल॥
हरे भरे जगल में होकर, खेली सुमनो से कर प्यार।
लाल लाल अधरों से मुझको कुजों मे जो रहे पुकार॥
बहती वीचि उदास क्योकि यह, सुन्दर दृश्य हुए अबअत।
सुनती हूँ मै गर्ज उदधि की, निगलेगा जो मुझे तुरन्त*।"

कवि—यही हाल नर के जीवन का, बचपन में होवे नादान।
युवा बितावे जग धधो में, वृद्ध हुआ दुख मीचि निदान॥

(विद्यार्थी)

---

* एक अँगरेज़ी पद्य के आधार पर।

निर्गंध फूल ।

कुसुम यह फूलना कैसा !
हर घडी झूलना कैसा !!
सुमन क्यो हँस रहे मन मे !
समाते क्यो नहीं तन में !! १ ॥

फुलाये मुँह खडे कल थे ।
अनमने कुछ पडे बल थे ॥
न कहते पास जो जाते ।
दशा कैसी न बनलाते ॥ २ ॥

हुआ क्या आज इतराते ।
अँगुलियाँ खूब छितराते ॥
हमें या आँख दिखलाते ।
समय-व्यवहार सिखलाते ॥ ३ ॥

मधुप का गीत कब तक है ।
सुरस रस रूप जब तक है ॥
बना कर काम चल देंगे ।
न पीछे नाम फिर लेंगे ॥ ४ ॥

पवन झूला हिलाता है ।
तरणि कर से न्हिलाता है ॥
चुगो कुछ और दिन मोती ।
सदा क्या चाँदनी होती ॥ ५ ॥

करो बस और मत फूलो।
सँभल जाओ अरे फूलो!
आयु निर्गंध हो कोई।
न पूछेगा तुम्हें कोई ॥ ६ ॥

उखाडे फिर मसल डाले ।
पदों से या कुचल डाले ॥
पखडियॉ जब बिखर जावें ।
पता ढूँढे नहीं पावें ॥ ७ ॥

विदुविनोद ।

चचल विदु गगन से उतरा,
बोला रत्नाकर से "तात ।
अति गभीर विपुल वैभव है,
महिमडल मे यश विख्यात ॥
मुझ से क्षुद्र आप अपनाते,
महिमा की बलिहारी है" ।
कहा सिधु ने तब हँस करके,
"यह सब दया तुम्हारी है" ॥

प्रसून-प्रलाप ।

प्रभो ! मत मुझे बनाओ फूल ।

अति लघु जीवन उस पर भी तन पाता है बहु शूल ॥
ग्रीषम-ताप गगन के गोले सहता हूँ दिन रात ।
शिशिर तुषार घोर घन वर्षा उस पर झझावात[1] ॥
चपला[2] चपल दिखाती आँखे डर पाती कर शोर ।
खग-मृग वन्य कुचलते मुझको कभी चुरात चोर ॥
मधुमक्खी लोहू की प्यासी चूस रही प्रत्यग ।
तन दुकूल सम उसमे वसते लघु कृमि कीट पतग ॥
कौन पुण्य कमनीय कलेवर ? कौन पाप गृह पक ? ।
कौन कम कटक कुल पाया ? उलटे विधि के अक !!! ॥
दिन भर यह मधुकर की कल कल कल न पडे दिनरात ।
बच्चे नोच धूल मे फेंकें करते पद-आघात ॥
मेरा हृदय छेदकर गूँथे हाय मनचले हार ।
देखे आगे और दशा क्या होगी हे करतार ॥

---

१ आधी २ बिजली ।

गँदे के फूल ।

चतुर्दशपदी (Sonnet)

मेरे आगन के गमले मे फूल खिले गेंदे के सात ।
हेममयी उनकी शुचि आभा मुझको देती हर्ष अपार ॥
मौन खडे मानो पीताम्बर सकेतो से करते बात ।
उनके सम्मुख नीरस लगता मुझ को यह सारा ससार॥
हरा भरा हो जाता हूँ मै देख देख हरियाले पात ।
भैस और पडिया के मुँह से उन्हे बचाया बारम्बार ॥
यह हेमत शीत रजनी का कई बार कर चुका कुघात ।
चित्ताकर्षक बने हुये वे हृदय—कठ का मेरे हार ॥
प्रात काल पवन बहता है प्रमुदित वदन रहे हे झूल ।
गृह नभ के सप्तर्षि बने हैं स्वय वही है अपना जोड ॥
एक नटखटी बालक आया तोड लिया उसने झट फूल ।
चिल्लाया मै पीछे भागा, छितराया तब उसे मरोड ॥
आज एक साथी बिछुडा है कहूँ इसे हा !!! किस की भूल ।
मुझको भी इस भाँति अचानक काल किसी दिन लेगा तोड॥

निशा मे माधवीलता का दृश्य ।

रात नहीं यह धूम घटा जिसने रवि ज्योति सभी निगली है ।
लाल प्रसून नहीं लपटें सित फूल नही यह राख डली है ॥
पल्लव ईंधन पा सुलगी फिर और बढी जब वायु चली है ।
बाग लता न खिली यह 'भूषण' भाग चलो बन आग जली है ॥

करोदा कुसुम ।

करे पान मकरंद भ्रमरावली ।
करोंदाकुसुम पर कि जामुन फली ॥
खुले नेत्र की या कि है पुत्तली ।
लिये अक मे चन्द्र बैठे हली[1] ॥

१ वृषक

वट-बोध ।

वट ने मातृ प्रेम पहचाना ।

बडा हुआ पत्ते वर्षाये ।
फूला जब तब फूल चढाये ॥
भेंट किये फल जो कुछ पाये ।
कलरव मिस गुण गाना ॥ १ ॥

भानु तेज ने उसे लुभाया ।
पवनदेव ने अति ललचाया ॥
अतरिक्ष ने भी फुसलाया ।
तदपि न भक्त भुलाना ॥ २ ॥

विभुता पाकर शीश झुकाया ।
पद छूने को हाथ बढाया ॥
आत्मसमर्पण पाठ पढाया ।
ऐसा ही बन जाना ॥ ३ ॥

अमरबेलि (Sonnet)

चला प्रभात वायुसेवन को शय्या से उठ बन की ओर।
प्रकृति पटल को बदल चुकी थी पहन लिया था उज्वल चीर॥
पूर्व दिशा मे अरुणरथी[1] ने ढीली करदी अपनी डोर।
कहीं नृत्य केकी करता था कहीं कर रहा कलरव कीर॥
आगे बढकर मैने देखा अमरबेलि का कृत्य कठोर।
कीकर[2] को कस रही करों से काली सदृश पी रही हीर॥
फूल फली पत्ता तन सूखा रहा नहीं काँटों में जोर।
हाँ बबूल वह उसका प्रतिफल घायल तू जो करे शरीर॥
व्यर्थ हुई तू अमर जगत मे अमरबेलि होकर बदनाम।
तन सूखी बाघिनि सी भूखी रहती है तू रुधिरासक्त॥
लटकी सदा रहेगी पापिन नहीं मिले महि पर विश्राम।
जिसने सिर पर तुझे चढाया बना हुआ जो तेरा भक्त॥
उसको ही तू चूस रही है यह तेरा है कुत्सित काम।
फूले फले न कभी यहाँ वे जो पीते औरों का रक्त॥

---

१ सूर्य्य का सारथी। २ बबूल।

तृतीय तरंग

(राष्ट्रीय)

राष्ट्रीय गीत ।

मेरा देश, प्यारा देश ।
सदा स्वतन्त्र, सुख का मन्त्र ॥
तेरा ही गाता मैं गान ।
मेरा प्यारा हिन्दुस्तान ॥
हिमगिरिगग, जलधि तरग ।
निर्मल नीर, सुखद समीर ॥
सभी सुनाते मीठी तान ।
मेरा प्यारा हिन्दुस्तान ॥
बन पथ-कूल, तरु-फल फूल ।
खग-मृग-मीन, सब स्वाधीन ॥
निज पितरों का पुण्यस्थान ।
मेरा प्यारा हिन्दुस्तान ।
गा हतन्त्र, रहे स्वतन्त्र ।
भारतवर्ष, हिय का हर्ष ॥
सत् विद्या शुभ गुण की खान ।
मेरा प्यारा हिन्दुस्तान ॥
बालक-वृद्ध, योगी ऋद्ध ।
सुर गन्धर्व, कहें सगर्व ॥

सब से बढ कर स्वर्ग समान ।
मेरा प्यारा हिन्दुस्तान ॥
तेरा मान , मेरा प्रान ।
तेरी धूल , जीवन - मूल ॥
वारूँ तुझ पर अपनी जान ।
मेरा प्यारा हिन्दुस्तान ॥

(मर्य्यादा)

मातृ-भूमि ।

लिया जहाँ पर जन्म जहाँ पर आयु बिताई ।
अन्न आदि से जहाँ पुष्ट कर देह बढ़ाई ॥
किये जहाँ सब कार्य जहाँ की रज सिरधारी ।
जीवन सम वह मातृ-भूमि है सुखदा प्यारी ॥१॥

रही पिता की पूज्य तथा मा की महतारी ।
सर्व धर्म की ध्येय प्राणदा धरा हमारी ॥
जिसकी महिमा अहो ! स्वर्ग से भी अतिभारी ।
प्राणों से भी अधिक मातृ भू सुखदा प्यारी ॥२॥

[stamp]

घर ।

जिस घर में माँ दूध पिलाती । जिसमे भोजन मुझे खिलाती ॥
दे दे लोरी जहाँ सुलाती । चिड़िया जहाँ सवेरे गाती ॥
मेरा सब से प्यारा घर ।
तीन लोक से न्यारा घर ॥ १ ॥

पिता कभी जो घर को आते । मेरे लिये खिलौने लाते ॥
बडे प्यार से मुझे खिलाते । गोदी मे लेकर यह गाते ॥
मेरा सब से प्यारा घर ।
तीन लोक से न्यारा घर ॥ २ ॥

जिस घर में हूँ खेला खाया । फल फूलो से जिसे सजाया ॥
वैसा कहीं न मैंने पाया । गूँज उठा जब उसे सुनाया ॥
मेरा सब से प्यारा घर ।
तीन लोक से न्यारा घर ॥ ३ ॥

दिन भर का मे थका थकाया । शाम हुई अपने घर आया ॥
भूल गया दुख मन हर्षाया । ईश्वर ने सुख सदन बनाया ॥
मेरा सब से प्यारा घर ।
तीन लोक से न्यारा घर ॥ ४ ॥

स्वतन्त्रता ।

हे स्वतन्त्रते देवि ! मही की महिमा न्यारी ।
निखिल राष्ट्र की जान मान की तू महतारी ॥
स्वर्ग-सर्वसम्पत्ति सुधा तू है वसुधा की ।
जिसको पीकर शेष नहीं फिर प्यास सुधा की ॥ १ ॥
देही आत्मा बनी शक्ति देवों की सारी ।
पशुपालिका पवित्र पतियों को तू प्यारी ॥
तू वीरों की वेदि जहाँ जीवन-बलि करते ।
शूर सदा तव हेतु समर में हँस हँस मरते ॥ २ ॥
योगी जन की सिद्धि, ऋद्धि तू भोगी जन की ।
मन की देवी, अहो ! दवा तू रोगी तन की ॥
तू मुमुक्षु की मुक्ति, शुक्ति[1] तू है सागर की ।
तू फणि की मणि बनी उक्ति तू है नागर की ॥ ३ ॥
तुझको पा हृत्कली नहीं किसकी खिलती है ।
मानो खोई हुई रंक को निधि मिलती है ॥
तू तरंगिणी सदृश जहाँ होकर है जाती ।
बसती बस्ती वहाँ और खेती लहराती ॥ ४ ॥
जिस रोगी को देवि ! हवा तेरी लगती है ।
उसकी सारी व्याधि शीघ्र तन से भगती है ॥
जहाँ जहाँ तव बीज रत्न बोया जाता है ।
वहाँ वहाँ सुख-नींद सदा सोया जाता है ॥ ५ ॥

---

१ सीप ।

जहाँ जहाँ पर सुखद दृष्टि तेरी होती है।
जहाँ जहाँ पर फलद वृष्टि तेरी होती है॥
वहाँ वहाँ पर सतत सपदा-सरिता बहती।
सब अभिलाषा पूर्ण किसी को कमी न रहती॥ ६॥

बढता बढता पेड किसी से रुक जाता है।
रुका सर्व सारल्य शीघ्र वह झुक जाता है॥
फूले फले न कभी छीन स्वातत्र्य लिया है।
जलने के अतिरिक्त और क्या काम किया है॥ ७॥

अति ही निमल नीर कहीं गड्ढे मे पडता।
तो कुछ दिन उपरान्त वहाँ पर निश्चय सडता॥
क्या उस जल के तुल्य निरन्तर जो बहता है।
तृषितों को कर तृप्त सदा उज्ज्वल रहता है॥ ८॥

पादप-पक्षी पकड एक पिजडे म पाले।
उसके आगे सकल वस्तु खाने को डाले॥
करें अनेक प्रयत्न नहीं वह खाता पीता।
या स्वतन्त्र हो जाय नहीं थोडे दिन जीता॥ ९॥

बन्दर तेरे बिना स्वाँग कैसा भरता है।
कूकुर तेरे बिना दूसरे घर मरता है॥
बद्ध सिहनी नहा चैन से खा पी सकती।
तुझको खोकर नहीं जाति कोई जी सकती॥ १०॥

चतुर्थ तरंग

(ऐतिहासिक)

जयसिंह के प्रति शिवाजी का पत्र ।

महाराज जयसिंह सामंत नर ।
तुही भारतोद्यान माली प्रवर ॥
तुही राम के वंश का अंश है ।
तुही राजपूतीय कुल हंस है ॥ १ ॥

तुझे पा हुई राज श्री है अचल ।
बढा वंश बाबर हुआ है प्रबल ।
शिवा का सु आशीष स्वीकार हो ।
नमस्कार तुझ को तथा प्यार हो ॥ २ ॥

जगन्नाथ स्वामी बचावें तुझ ।
वही धर्म का पथ बतावें तुझ ॥
सुना यह गया है कि मुझ पर चढ़ा ॥
विजय हेतु तू आज दक्षिण बढा ॥ ३ ॥

अर हिन्दुओं का दबा के गला ।
यशस्वी हुआ। चाहता है भला ॥
जिसे जानता है कि यह लालिमा ।
वही देश के द्रोह की कालिमा ॥ ४ ॥

कहाँ एक पल भी विचारे अगर ।
कि किसके रुधिर से सना आस्य[1] कर ॥
कि सचमुच परत्रेह[2] क्या रंग है ।
तुझे ज्ञात हो कालिमा संग है ॥ ५ ॥

स्वयं जो विजय हेतु आता यहाँ ।
पलक शीश अपना बिछाता यहाँ ॥
चला साथ होता चमू ले यही ।
तुझे सौंपना जीतकर यह मही ॥ ६ ॥

तुझे भेज **औरंग** ने चाल की ।
बुरी टेव है धूर्त्त भूपाल की ॥
न जानूँ खिलाऊँ तुझे खेल क्या ।
निबलता दिखाने करूँ मेल क्या ॥ ७ ॥

सदा वीर को एकसी है घड़ी ।
नहीं सिंह तता कभी लोमड़ी ॥
अगर काम तलवार से हम करें ।
परस्पर लड़े आर्य कट कट मरें ॥ ८ ॥

सदा जो यवन रक्त पीती रही ।
चढ़े हिन्दु के गले असि वही !!! ॥
स्वयं तुर्क आते मचाने समर ।
समझता ! ।खेट आया स्वघर ॥ ९ ॥

---

1 मुख । 2 परत्र+इह लोक और इस लोक में ।

अधर्मी असुर रुप ओरग है।
उसी न निकाला नया ढग है॥
स्वय लड सके वह नहीं सामने।
इसी हेतु भेजा तुझे वाम[1] ने॥ १० ॥

यही चाहता यम कैसे दहे।
न कोई बली हिन्दुओ मे रहे॥
परस्पर लडे सिह कटकर मरे।
विपिन मे यत राज गीदड करे॥ ११ ॥

न आता छिपा भेद क्या ध्यान मे।
भुलावा दिया डाल अज्ञान मे॥
जगत को भली भाति तू जानता।
बनी के कुसुम शूल पहचानता॥ १२ ॥

तुझे क्या उचित युद्ध, किस भूल में?
मिला हिन्दुओ के न सिर धूल में॥
स्वकर्मण्यता को न बर्बाद कर।
युवक शेखसादी-कथन याद कर॥ १३ ॥

"नहीं अश्व सर्वत्र दौडा सके।
भगे ढाल भी फेक कर जब थकें"॥
दिखाते मृगो पर हरी व्याघ्रता।
नही सिह के साथ गृहयुद्धता॥ १४ ॥

---

१ दुष्ट।

अगर धार है वीर करवाल में।
अगर जान गंधर्व[1] की चाल में॥
तुझे चाहिये धर्म—द्रोही हने।
मुसलमान-मत-मूल को भ्रष्ट खने॥ १५॥

महाराज दारा अगर मानते।
कृपा-वाद्य हम पर सदा बाजते॥
भुलावा दिया वीर जसवंत को।
न सोचा हृदय में बुरे अंत को॥ १६॥

अराया नहीं लोमड़ी-खेल में।
चला युद्ध को केहरी मेल[2] में॥
लगे हाथ क्या व्यर्थ श्रम में तुझे।
तृषा क्या कहीं मृगजल[3] में बुझे॥ १७॥

फिरे फूलता नीच के मान पर।
बुंदेला[4]-कुपरिणाम को ध्यान कर॥
कुंवर छत्र[5] की तो दशा ज्ञात है।
कि उस पर हुआ क्या न व्याघात है॥ १८॥

नहीं जानता बीत जो अब रही।
न क्या क्या विपति हिन्दुओं ने सही॥
लिया मान संबन्ध लघु जोड़ कर।
दिया फेर पानी स्वकुल-कान पर॥ १९॥

---

१ घोड़ा। २ संघ। ३ मृगतृष्णा। ४ ओड़छा नरेश वीरसिंह देव के पुत्र जुझारसिंह बुंदेला। ५ राजा छत्रसाल।

दनुज साथ सबध क्या बात है।
कमरबद्ध से दृढ न वह तात है॥
सभी भाँति वह स्वार्थ रक्षा करे।
पिता भाइयो के न बध से डरे॥ २०॥

नृपति भक्ति अब तू दिखावे अगर।
तदा शाह-बर्ताव[1] को याद कर॥
मिला अश कुछ बुद्धि के तत्व का।
भरोसा तुझे वीर पुरुषत्व का॥ २१॥

तपा खड्ग निज देश के ताप से।
बुझा पीडितों के दुसह आप[2] से॥
परस्पर समर का न यह काल है।
बिछा हिन्दुओं के लिये जाल है॥ २२॥

न नारी न बच्चे नहीं देश जन—
पुजारी न मदिर नहीं देव धन—
सभी पर पडा दु ख का ढेर है।
न सीमा रही घोर अधेर है॥ २३॥

यही हाल उसका रहा यदि कहीं।
रहे चिह्न भू पर हमारा नहीं॥
अहो! एक मुट्ठी मुसलमान नर!!!
करें राज इतने बडे देश पर॥ २४॥

---

१ राजा जयसिंह ने बादशाह शाहजहाँ का विरोध कर और औरङ्गज़ेब का साथ दे राज्यद्रोह का परिचय दिया था। २ जल।

नही हेतु पुरुषार्थ बल है तथा।
हृदय-चक्षु को खोल पढ ल कथा॥
सदा गोटियाचाल कैसी चले।
वदन पर नया रग नित दख ल॥ २५॥

निजी हथकडी-बडियाँ-पर-कर!
हमारे सिरों पर हमारा तवर॥
करे यत्न भरसक रखे वश को।
बचावें तथा धर्म को देश को॥ २६।

करें यत्न मिलकर सुनिश्चय कर।
तथा हिंद के हेतु जा से मरें॥
नया ढग हो म्यॉन स असि खिले।
कि तुर्की बतुर्की[1] उसे फल मिले॥ २७॥

महाराज **जसवत** स जा पट।
तथा छद्मवेशी हृदय स हटे॥
कही मेल मेवाड[2] से भी करे।
बडा काम (आशा मुझ ह) सरे॥ २८॥

चढाई करो घेर सब ओर से।
कुचल सॉप का शीश दो जोर से॥
इसी सोच में कुछ दिवस वह रहे।
न दक्षिण-विजय-हेतु बातें कहे॥ २९॥

---

१ तुर्की बतुर्की—जैसे का तैसा। २ मेवाड़ के महाराणा राजसिंह।

इसी बीच मे मे बटा जाड दल।
अली और अबदुल* सिरों को कुचल—
घनो की तरह मम अनी गर्ज कर।
करे खड्ग वर्षा यवन शीश पर॥ ३०॥
यहाँ पर रहे नाम उनका नहा।
मिले चिह्न ढूँढ़े न उनका कहीं॥
तथा साथ लेकर चतुर शूर नर।
तथा अश्वरोही प्रबल कुतधर॥ ३१॥
नदी इव तरङ्गित तथा गान मे।
निकल बिध्य से आन मैदान म॥
भली भाति मे शीघ्र सेवा करूँ।
उस पूछ लेखा तुम्हारा भरूँ॥ ३२॥
उपस्थित करूँ पाश व्यायाम[1] का।
कि सकीर्ण हो क्षेत्र सग्राम का॥
चले वाहिनी साथ लेकर वहाँ।
कि है जर्जरीभूत दिल्ली जहाँ॥ ३३॥
न औरङ्ग[2] हो जेब[3] होवे नही।
किसी को सतावे न छल असि कहीं॥
बहादे नदी रक्त की शुद्धतर।
कि हो तृप्त जिससे हमारे पितर॥ ३४॥

---

* बीजापुर का सुल्तान अली आदिलशाह द्वितीय और गोलकुडा का सुल्तान अब्दुल्ला कुतुबशाह।

१ कठिनता। २ राज सिहासन। ३ शोभा।

पिता न्यायकारी-मदद मे अभी ।
लिटादे उसे कब्र में हम सभी ॥
यहा मे अभी दूर यह रोग हो ।
हृदय-आँख-मन-हाथ-उपयोग हो ॥ ३५ ॥

मिले दो हृदय तो शिला फोड दे
अनायास ही यूथ को तोड दे ॥
अभी और कहना मुझे बात है ।
कि जिसका न लिखना उचित तात है ॥ ३६ ॥

परस्पर मिले आर निर्णय कर ।
उठावे न सकट न लड कर मर ॥
अगर तू कहे पास आऊँ स्वय ।
सुनूँ बात सब भेद पाऊँ स्वय ॥ ३७ ॥

करें बात एकात म मित्रवर ।
पडी उलझने साफ हों शीघ्रतर ॥
करे यत्न भरसक जहा तक बने ।
चला मत्र कोई असुर को हने । ३८ ॥

करें सिद्ध सब भाति निज काम को ।
परत्रेह ऊँचा करे नाम को ॥
शपथ खडग-हय धर्म निजदेश की ।
न चिता तुझे हो तनिक क्लेश की ॥ ३९ ।

नहीं सोच अफजल दुपरिणाम को ।
सचाई न थी नीच म नाम को ॥

लिये उग्र हबशी प्रखर द्रुत हय ।
फिरे बान में वह करे शीघ्र जय ॥ ४० ॥

अगर हाथ पहले चलाता न तब ।
बता पत्र लिखता तुझे कौन अब ॥
मुझे किंतु आशा न तुझ से यही ।
कभी क्योंकि रिपुता न मुझ से रही ॥ ४१ ॥

यथायोग्य उत्तर मिले जो मुझे ।
निशा में मिलूँ मैं अकेला तुझे ॥
दिखाऊँ तुझे पत्र जो गुप्त हैं ।
कि शाइस्तखाँ जेब से लुप्त हैं ॥ ४२ ॥

तत नेत्र पर डाल संदेह—जल ।
करूँ दूर सुख-स्वप्न तेरा सकल ॥
बताऊँ तुझे जो फलाफल हिले ।
प्रतीक्षा करूँ शीघ्र उत्तर मिले ॥ ४३ ॥

अगर पत्र तुझको न स्वीकार यह ।
तदा तव चमू तेज तलवार यह ॥
यदा जायगा भानु कल को चला ।
कढ़े म्यान से बाल विधु, बस भला ॥ ४४ ॥

—(नागरी प्रचारिणी पत्रिका में बा, जगन्नाथदास 'रत्नाकर' द्वारा प्रकाशित प्राचीन फ़ारसी पद्य पत्र का छायानुवाद)

देवलोक की दिवाली ।

तथा

भारत माता का विलाप ।

मनाऊँ कहो आज कैस दिवाली ।
अरे देव ने घोर आपत्ति डाली ॥
किया रग म भग तूने विधाता ।
नही दूसरो का भला देख पाता ॥ १ ॥

अरे काल तेरी बुरी चाल कैसी ।
सदा देखता हे गले दाल कसी ॥
अभी घाव मेरे नही पूर पाये ।
यहाँ से दयानन्द तूने उठाये ॥ २ ॥

दयानन्द प्यारे अहो नैन तारे ।
दुलारे हमारे कहाँ को सिधारे ॥
धरूँ धीर कैसे नही दृष्टि आता ।
दुखी दीन का था तुही एक त्राता ॥ ३ ॥

निराकार को त्याग साकार माना ।
गिरे थे, नही धर्म का तत्व जाना ॥
बडे दु ख गौ और मैंने उठाये ।
बुरी थी दशा देश तूने बचाये ॥ ४ ॥

दुए वेद थे लोप तूने निकाले ।
पडे थे मुझे जान के हाय लाले ॥

बडा था भरोसा तुम्ही मे हमारा ।
बिचारा तुही एक माँ का सहारा ॥ ५ ॥

मुझे आसरा एक तेरा बडा था ।
पडी भीर तो एक तूही अडा था ॥

कहीं डूबने से न जो तू बचाता ।
न मेरा पता आज ससार पाता ॥ ६ ॥

कहाँ त्याग मेरा गया लाडला है ।
न तेरा मुझे हा पता ही चला है ॥

जला के दिया ढूँढती द्वार कोना ।
न पानी तुझे हाय रे लाल छोना ॥ ७ ॥

हमारा दिवाला दिवाली नहीं है ।
बगीचा गया सूख माली नही है ॥

खिले फूल शोभा सदा जो बढाते ।
पडे धूल में आज हैं लात खाते ॥ ८ ॥

बिना लाल तेरे हुई जान भारी ।
न कोई सुने बात पूछे हमारी ॥

तुम्हीं ने मरी जान म जान डाली ।
जडी को पिला के तुम्ही ने बचाली ॥ ९ ॥

गया **राम** के साथ **सौमित्र** भ्राता ।
महावीर सुग्रीव से जोड नाता ॥
यहाँ **राम** लकेश को मार आये ।
सभी ने घरो म दिय थ जलाय ॥ १० ॥

न था सग कोई हरी सा दहाडा ।
अकेले अधी दानवों को पछाडा ॥
सुरों का किया काम ए शक्तिशाली !
उन्होने तुम्हारे लिये की दिवाली ॥ ११ ॥

अरे देवताओ सदा के जलैया ।
तपस्वी सती वीर के हो छलैया ॥
इसी से उसे है यहाँ से बुलाया ।
मनावें न त्योहार खोटा कराया ॥ १२ ॥

प्रतापी महा तेज वाला दिया है ।
उपालभ[1] आदित्य ने जा किया ह ॥
निशानाथ न भी न आके कहा ह ।
कि आकाश मे कूट क्या हो रहा ह ॥ १३ ॥

सता दूसरो को तुम्हें हर्ष होगा ।
गिरा क्या मुझे अत उत्कष हागा ॥
न होगा भला दिव्य माला बनाई ।
दुखा जी हमारा दिवाली मनाई ॥ १४ ॥

---

१ शिकायत ।

वैदिक बलिदान ।

जिसने वैदिक धर्म दुबारा जिला दिया है ।
जिसने भारत सुप्त सुमन सा खिला दिया है ॥
वे हिन्दू मतिहीन जिन्होने रलक मारा ।
अपने धड से शीश स्वय निज हाथ उतारा ॥
दयानद ने प्राण दे शव मे डाली जान है ।
ऋषियो का सद्धर्म पर यो होता बलिदान है ॥ १ ॥

अधा धुधी देख यवन लोगों की जिसने ।
समझी भेषज शुद्धि सकल रोगो की जिसने ॥
खडन स कर खड दीन बेदीन किया है ।
जिसने अपना अश पुराना छीन लिया है ॥
खेल कपट इस्लाम ने हरली जिसकी जान है ।
लेखराम से वीर का हुआ सत्य बलिदान है ॥ २ ॥

यही अहिसा धम आँख म मिचें भरना ?
महावीरता यही प्राण औरों के हरना ??
तो भी वैदिक वीर नहीं मरने से डरते ।
आ देखे जिनराज धर्म पर इस विध मरते ॥
जैसे तुलसीराम ने त्यागे अपने प्रान है ।
धर्म वेदि पर आर्य्य वर यो होते बलिदान है ॥ ३ ॥

काशिक मुनि का यज्ञ राम ने यथा रचाया।
पतित उठाने हेतु आपने पेर बढाया॥
रामचन्द्र का नाम सार्थक आज कमाया।
महाजनो का पथ यही हमको बतलाया॥
मेघो के उद्धार म अपनी झोकी जान हे।
जग को यह दिखला दिया यो होता बलिदान हे ॥४॥

वैदिक वीरा उठो उठो तैयारी करला।
धर्म देश के लिये मित्र हॅस हॅस कर मरलो॥
यश सोरभ से सद्य नभोमडल को भर लो।
लाखो आहुति छोड देव पितरा का वर लो॥
अभी अधूरा यज्ञ हे इसका यही विधान हे।
हम भी देखे कौन यो अब होता बलिदान हे॥ ५॥

(आर्य्य मित्र)

महमूद की मृत्यु ।

अवस्था एक सी किस की रही है ।
सदा यह घूमती फिरती मही है ॥
चढ़ा ऊपर गगन में रवि गिरेगा ।
स्वय निर्मित कभी घन से घिरेगा ॥ १ ॥

नृपति **महमूद** की **गजनी** पुरी थी ।
यवन-मत चक्र को दृढतर धुरी थी ॥
बली सुलतान की थी राजधानी ।
विदित है विश्व मे जिसकी कहानी ॥ २ ॥

समय जब मृत्यु का नप की निकट था ।
भयानक दृश्य था सकट विकट था ॥
पडा वह मृत्यु शय्या पर विकल है ।
उसे सब दीखता यमदूत-दल है ॥ ३ ॥

भगा आनन्द मुख पर है उदासी ।
सभी बेचैन उसके दास दासी ॥
कडी यमयातना को सह रहा है ।
नयन से नीर नल सा बह रहा है ॥ ४ ॥

उसासे ले रहा करवट बदलता ॥
मगर इस मौत से कुछ बस न चलता ॥
हुआ है आँख के आगे अधेरा ।
महल में ही अचानक आज घेरा ॥ ५ ॥

अचेतन है न उसको ध्यान तनका।
पता लगता न उसके चपल मन का॥
नहीं आवेश है, आभा नहीं ह।
कहीं शिर—छत्र है, खजर कहीं है॥ ६॥

जिसे थी देख कर धरती दहलती।
न उसके सामने से मात टलती॥
लता सत्कर्म की उसके फली है।
चिता मे लेटने चिता चली ह॥ ७॥

हुआ जब चेत तब उसने पुकारा।
यहाँ लाओ खजाना शीघ्र सारा॥
वही है प्राण, तन, मन, धन वही है।
वही परिवार है प्रियजन वही ह॥ ८॥

मँगाओ रत्न, हीरा, लाल लाओ।
सभी को सामने ढेरी लगाओ॥
प्रभा जिसकी मुझे पहले हँसाती।
रुलाती है वही जब याद आती॥ ९॥

अनाथो को रुला इसको कमाया।
हजारो दीन दुखियो को सताया॥
असख्यो को उसी के हेतु मारा।
वही अब कर रहा मुझ से किनारा॥ १०॥

हिलाई जीभ तो उसको निकाला।
उठाई आँख तो बस फोड डाला॥

खिँचा कर खाल लाखों को फुलाया।
न ले करवट उन्हें ऐसा सुलाया॥ ११॥

अनेको देश थ मैने उजाडे।
घरो के घर इसी कर से बिगाडे॥

गवाही दे रहे खँडहर पडे हे।
निशा मे बोलते उल्लू बडे ह॥ १२॥

सभी आतक हा! फीका पडा है।
हुआ अब पाप का पूरा घडा है॥

न दलबल धन यहाँ कुछ काम आया।
कसी दुष्काल ने है आज काया॥ १३॥

खजाना राज का सारा लुटाऊँ।
अगर जीवन घडी दो चार पाऊँ॥

रहेगी यह सदा दुख की कहानी।
रहूँगा मै न मेरी राजधानी॥ १४॥

बचावे अब मुझे कोई बचावे।
प्रसारित निज करों को काल आवे॥

हृदय में जो सदा भगवत होता।
न मेरा अन्त यो हा! हन्त होता॥ १५॥

हटा सब स्वार्थ का मन से अँधेरा ।
मुझे है सूझता जग में न मेरा ॥
कुकर्मों का यही परिणाम होगा ।
प्रलय तक नाम यह बदनाम होगा ॥ १६ ॥

पुराने कृत्य शुभ सारे सिराने ।
इसी से हो गये अपने बिराने ॥
अभी जीवन-कुसुम यह अधखिला है ।
मुझे यह दण्ड क्या भगवन् मिला है ॥ १७ ॥

बुझा ही चाहता जीवन—दिया है ।
झकोरा काल ने उसको दिया है ॥
नहीं है शेष उसमें तेल बाती ।
टिमटिमाता यथा तारा प्रभाती ॥ १८ ॥

अकेला हाय खाली हाथ जाना ।
न कोई आज मेरे साथ जाता ॥
वचन यह सत्य है सपना नहीं है ।
मरे पर प्राण भी अपना नहीं है ॥ १९ ॥

उसी क्षण श्वास धमनी[1]-गति रुकी है ।
शिथिलता छागयी गर्दन झुकी है ॥
हुआ स्वर बन्द पुतली फिर गई है ।
जटिल जीवन जवनिका[2] गिर गई है ॥ २० ॥

---

१ नाडी । २ पर्दा ।

प्रह्लाद-प्रतिज्ञा

पिता ! भगवान की लीला निराली।
वही विश्वोपवन का विश्वमाली॥
जिसे चाहे सुधा सम पय पिलादे।
अगर चाहे सुमन सूखे खिला दे॥ १॥

वही मरुभूमि में सरिता बहादे।
हरी खेती वहाँ पर लहलहा दे॥
उसे चाहे अगर पल मे उजाड।
वही ब्रह्माड को जट स उखाड॥ २॥

किसी को रक से राजा बनाद।
बिना नृप-नाक से चाहे चना दे॥
न कोई पार उसका पा सका है।
जिसे देखा वही गाकर थका है॥ ३॥

न बल से काम अब कुछ चल सकेगा।
न छल का दाम ही फिर फल सकेगा।
न खल का दल मुझे यह दल सकेगा।
अचल विश्वास है क्या टल सकेगा॥ ४॥

भुका है शीश असि ऊपर चलाओ॥
खुशी से अग्नि मे मुझ को जलाओ॥
गजा के पैर से चाहे पिराओ।
गले में गॉस दे गिरि से गिराओ॥ ५॥

डराना व्यर्थ है क्या मैं डरूँगा।
बुलालो मृत्यु का स्वागत करूँगा॥
न अपनी बात से हर्गिज टरूँगा।
जिऊँगा ध्यान तब तक मैं धरूँगा॥ ६॥

भला मैं बन से क्या दहल जाऊँ।
भला क्या दण्ड से मैं दहल जाऊँ॥
नहीं है जल की भी झल भारी।
परीक्षा आज ही ले लो हमारी॥ ७॥

वही आड़े समय में काम आवे।
वही मेरी सदा बिगड़ी बनावे॥
नहीं कुछ ध्यान अपने शीश का है।
मुझे केवल भरोसा ईश का है॥ ८॥

वही कर्तार सब संसार का है।
वही भर्त्तार सब संसार का है॥
वही सुख सार मुझ से हीन का है।
वही आधार मुझ से दीन का है॥ ९॥

मुझे अखिलेश है वह प्राण प्यारा।
उसी पर मैं पिता सर्वस्व हारा॥
कहो यमयातना कैसे सहूँ मैं।
विमुख क्यों भक्ति से 'विभु' की रहूँ मैं॥१०॥

(गृहलक्ष्मी)

पंचम-तरंग

(स्फुट)

' कविते तेरा वास कहाँ । '

मने पूछा 'कविता देवी ! तेरा सुन्दर वास कहाँ । ''
बोली "मै रहती हूँ सतत सकल लोक उल्लास जहाँ ॥
दुखियो के आँसू में मुझ को दीनो के उछ्वासो में ।
और अनाथो की आहो में पाओ पीडित दासो में ॥ १ ॥
बडे बडो के मुसकाने म बच्चो के तुतलाने में ।
वीणा की झनकार मधुर में गाने और बजाने में ॥
पादप के पत्ते पत्ते म मिल तुम्हे हरियाली मे ।
पर्वत की ऊँचीं चोटी पर सागर झरना-नाली मे ॥ २ ॥
ओस-कणो मे पडी घासपर वर्षा की बौछारों में ।
सूर्य-चन्द्र की अशुमाल[1] म नभ के हँसते तारो मे ॥
कूजित पक्षी कलकठो म मजुल विकसित फूलों में ।
वन उपवन मे लताकुज मे कालिन्दी के कूलों मे ॥ ३ ॥
सनसन करती फिरूँ पवन म जल म कलकल करती हूँ ।
ऋतु ऋतु मे निज रूप बदल कर मै सवत्र विचरती हूँ ॥
श्रद्धा मे वात्सल्य भाव से हृत्तत्री खटकाओगे ।
तो अपने ही मन मन्दिर मे जब चाहो तब पाओगे" ॥४॥

(मर्य्यादा)

---

१ किरण समूह ।

योगिराज-उलूक

परम पद उल्लू का पाया ।
निजन वन मे वास बनाया दिन भर ध्यान लगाया ॥
रवि का सब ऐश्वर्य भुलाया निशि मे प्रेत जगाया ।
अन्नाहार न किया आज तक व्रत का नेम निभाया ॥
मृदुस्वर से उत्साह बढाया विस्मृत पथ बताया ।
निरे 'काठ के उल्ल' समझें क्या यह मेरी माया ॥

(श्रीशारदा)

चन्द्र और जुगनू

उदित हुआ नभ चन्द्र मुदित हैं सज्जन ।
उसे देख खद्योत जला अपने मन ॥
क्यो मृगलाञ्छन* लोग बडा बतलाते ।
मेरे होते उसे अधिक अपनाते ॥ १ ॥

दिन को सूरज बना रात को हम है ।
क्या गिनती उडु चन्द्र न हरते तम है ॥
जिस पर जाते बैठ उसे चमकाते ।
लटके हीरे लाल वहाँ दिखलाते ॥ २ ॥

कुहू निशा में चन्द्र और तारागन ।
छिपें, तिमिर हो घोर और निर्जन वन ॥
पाता है जो पथिक हमारा दर्शन ।
पथ होता है सुगम पार हो कानन ॥ ३ ॥

---

*चन्द्रमा ।

छिप जाता है अञ्ज कभी जो घन में।
या रख लेता राहु कभी स्ववदन म॥
छा जाता जब घोर अँधेरा ऊपर।
फैलात आलोक हमी हे भूपर॥ ४॥

दिन पर दिन जब क्षीण क्षपाकर* होता।
घट जाती है ज्योति कला निज खोता॥
पर मेरा ह तेज एक सा रहता।
मुझे राहु या केतु नहीं कुछ कहता॥ ५॥

दिय करे हम गुल्म लता तरु फल को।
आलोकित हम करे सदा जल थल को॥
पा इतना सम्मान जगत मे रहते।
पर शशि को सब लोग कलकी कहते॥ ६।

जुगनू की सम्पूर्ण कथा को सुन कर॥
बैठा विज्ञ उलूक पेड के ऊपर।
सिर को ऊँचा किया गर्व को तोला।
गोल गोल दो नयन खोल कर बोला॥ ७॥

मेरे जुगनू भ्रात! कथा तव सुन्दर।
नहीं जानता अज्ञ हाय नर वानर॥
तव गुण गौरव नही विदित हे इसको।
शोक मूढ़ की बुद्धि कहूँ क्या किस को॥ ८॥

---

* चन्द्रमा।

यद्यपि आभा पुन रूप में सुन्दर।
तुझसा कोइ नहा सृष्टि के अन्दर॥
तो भी तुच्छ पतग तुझे नर कहते।
पर मयक को मूढ सुधाधर कहते॥ ९॥

तव कुल जीवन नि ग्न करे क्या उनका।
तुझ से कुछ भी काम सरे क्या उनका॥
जो छिप जाता चन्द्र एक पल घन मे।
दर्शन को अति व्यग्र लोग हो मन मे॥ १०॥

क्या मनुष्य की बात? देख विधु प्रियवर।
उद्वेलित हो उदधि उछलता ऊपर॥
यद्पि कलकित सोम मानते सब नर।
रखते पर निज नाम चन्द्र सज्ञा पर॥ ११॥

यह भी दुर्व्यवहार देखले नर का।
इदुकिरण को द्वार खुला हे पर का॥
पर तुझको वे मित्र परों में पाकर।
पकड चढाते सद्य प्रदीप शिखा पर॥ १२॥

मूरख बनता चतुर बडा निज मन से।
करता कुछ उपकार न अपने तन से॥
उल्लू ने खद्योत बहुत शर्माया।
शठ चमका निज देह वहाँ से धाया॥ १३॥

श्री सरोजरजन वन्द्योपाध्याय एम० ए० कृत बगला पद्य का अनुवाद।

उद्देश्य

जीवन का उद्देश्य नहीं है खाना पीना।
जो जीता इसलिये वृथा है उसका जीना॥
खा पीकर तो पेट काग भी भर लेता है।
मृगशावक भी घास खेत की चर लेता है॥ १॥

इस से अच्छा बैल जोतता जो दिन भर है।
जो मनुष्य के लिये चम देता मर कर है॥
कूकर है वह भला सदा रखवाली करता।
जो खाकर उच्छिष्ट उदर को अपने भरता॥ २॥

ईश्वर ने दो हाथ पैर का मनुज बनाया।
बुद्धि ज्ञान से युक्त उसे दी सुन्दर काया॥
बडे शर्म की बात अगर वह ठाली बैठे।
चींटी से ले सीख नही वह खाली बैठे॥ ३॥

जीवन है वह भला काम जो पर के आवे।
मनोयोग है वही सदा जो प्रभु को ध्यावे॥
धन का है उपयोग दूसरो के दुख टारे।
पशु पक्षी भी नहीं स्वार्थ की कभी विचारे॥ ४॥

जो ऊँचा हो लक्ष्य काम भी ऊँचा होगा।
भूमण्डल के मध्य नाम भी ऊँचा होगा॥
आलस को दो छोड और श्रम को अपनालो।
करलो पर उपकार पुण्य यश नाम कमालो॥ ५॥

अपना एक अवश्य उच्च आदर्श बना लो।
उसके पीछे चलो अन्य से चित्त हटालो॥
जुट जाओ जो सद्य सफलता दौडी आवे।
मरने पर भी काम तुम्हारी याद दिलावे॥ ६॥

आशे !

चतुर्दपदी (Sonnet)

मोह निशा का आशे ! तेरी बना उलूक मनुष्य प्रवीन,
जिस पर छडी फेर देती है उसे बनाती निज अनुकूल॥
तेरी अक दौड सब आते वशी को ज्यो दौडे मीन।
मोहनमयी लोरियाँ सुनकर वह सब सुध जाता है भूल॥
तेरे जल मे गोते खाकर कितने बैठे दीन मलीन।
पहले तू उसको दिखलाती हरे भरे उपवन के फूल॥
जैसे हरिन पाश मे पडता सुन सुन कर भीलिन का बीन।
शिशु को लाड वृकी का जैसे, पहुचाता है उसको शूल॥
ज्यो अगिया-बैताल पथिक को देती है चक्कर मे डाल।
मादक सेवी को ज्यो मदिरा दीप शिखा पर गिरे पतग॥
मृग को जैसे मृगतृष्णा है नर को व्यालिन बनी कराल।
पहले तू फुसला लेती है फिर करती पीछे से तग॥
कभी न मुक्ति उसे मिलती है पड जाता जो तर जाल।
हमने देखा है इस जग मे आशे ! तेरा अद्भुत ढग॥

बाल्य-स्मृति

कहाँ सरल बचपन मेरा ।
कहाँ चपल वह मन मेरा ॥
कहाँ तरल जीवन मेरा ।
कहाँ सकल परिजन मेरा ॥ १ ॥

कहाँ गई मीठी बोली ।
सिता-डली मानो घोली ॥
माता की पुचकार कहाँ ।
हाय ! पिता का प्यार कहाँ ॥ २ ॥

साथी सगी छोड गये ।
मुझ से क्यो मुँह मोड गये ॥
दौड गये मुझ से पहले ।
मन मेरा कैसे बहले ॥ ३ ॥

आपस मे अब मेल नहीं ।
गेद फिरकनी खेल नही ॥
चकई मेरी टूट गई ।
आँखमिचौनी छूट गई ॥ ४ ॥

भौरे चक्कर फिरे न अब ।
खेल कबड्डी गिरे न अब ॥
गिल्ली डडा रहा नहीं ।
मिट्टा का घर गया कहीं ॥ ५ ॥

वह फुरसत की रात कहाँ।
मित्रो वाली बात कहाँ॥

अपने घर के हम राजा।
खूब बजात थे वाजा ॥ ६॥

चिन्ता पास न आती थी।
पीडा नही सताती थी॥

द्वेष भाव का नाम नही।
वहाँ कपट का काम नहा॥ ७॥

भूख लगी रो जाते थे।
जा चाहे सेा खात थ॥

लाला हमे न लाने का।
खाने और कमाने का॥ ८॥

रूठ कहीं।जा जात थ।
पिता मनान आत थ॥

भाई बहिन हमारे थ।
सब के ही हम प्यार थ॥ ९॥

मा के जी के टुकडे थे।
बने चाँद के मुखडे थ॥

नहीं पालना गोद नहीं।
पहले का सा मोद नहीं॥ १०॥

अबका सा जजाल नही।
और दुरगी चाल नहीं॥
ऊँच नीच का ध्यान नहीं।
साँच झूठ पहचान नहीं॥ ११॥

नही कहानी अब सुनते।
वन में नहीं फूल चुनते॥
पैजनियों का नॉच नही।
ताथेई नौ पाँच नहीं॥ १२॥

कहाँ गया वह भोला पन।
छिपा कहाँ पर पहला मन॥
कही लगा क्या तुझे गहन।
या पहुँचा तू सघन गहन[1]॥ १३॥

व्यर्थ चीखता चिल्लाता।
पास नहीं तू क्यो आता॥
जरा मुझे अब जीत रही।
मै जानूँ जो बीत रही॥ १४॥

सुख की अब वह नींद नहीं।
चली गई सब हँसी कही॥
खाना पीना तुतलाना।
कहाँ गोद का मुसकाना॥ १५॥

---

१ वन।

याद मुझे तेरा आती ।
जलती है मेरी छाती ॥
आ जा कंठ लगा लूँ मैं ।
अपने शीश चढ़ा लूँ मैं ॥ १६ ॥

आ जा रे ! मेरे बचपन ।
तेरा कर लूँ फिर दर्शन ॥
क्या तू मुझको भूल गया ।
देख वही हूँ नहीं नया ॥ १७ ॥

छोड़ गया जब तू बचपन ।
चला गया सब तन मन धन ॥
ज्यों ज्यों बढ़ता जाता हूँ ।
पास मृत्यु के आता हूँ ॥ १८ ॥

परोपकार

पिघले शिला कभी न विदित यह बात है।
पर क्यो तू गिरि स्रोत बहाता तात ! है ॥
बैठ यहाँ पर वत्स ! मधुर जल पीजिये।
करिये पर उपकार और क्या कीजिये ॥ १ ॥

अय चटिके ! कल गान किस लिये गा रही।
उडती भरी उमग मोद क्या पा रही ॥
बैठ यहाँ पर वत्स ! श्रवण-सुख लीजिये।
करिये पर उपकार और क्या कीजिये ॥ २ ॥

अहो ! वसन्त-रसाल[1] आज तुम क्यो फले।
सौरभ से परिपूर्ण मुझे लगते भले ॥
हे मेरे प्रिय वत्स ! पके फल लीजिये।
करिये पर उपकार और क्या कीजिये ॥ ३ ॥

जलते क्यो तुम दीप अँधेरी रात में।
पहुँचे तात ! न घात तुम्हारे गात में ॥
बैठ यहाँ पर याद पाठ निज कीजिये।
करिये पर उपकार और यश। लीजिये ॥ ४ ॥

इस जग में प्रति वस्तु बनी मम अर्थ है।
पर मेरी यह आयु जा रही व्यर्थ है ॥
हे बालकगण ! आज यही प्रण कीजिये।
करके पर उपकार सदा यश लीजिये ॥ ५ ॥

---

५ १ आम।

सूर

सूर का पद किसने पाया ?

जिसने अपनी प्रखर प्रभा से जगत प्रसुप्त जगाया
जिसने अपनी कलित कला से कलानाथ चमकाया।
जिसने अपनी दिव्य दीप्ति से द्विषतम दूर हटाया
जिसने निज कोमल किरणों से हृदय-कंज विकसाया
जिसने जल घनश्याम गुणों का अवनी पर वर्षाया।
जिसके सागर को पीकर भी कभी न भक्त अघाया।
वही सूर है दिव्य-गगन का यह केवल है छाया

धर्म-दशक

धृति —धैर्य धरो आगे बढ़ो, पूरा हो सब काम ॥
उस दिन ही फलते नहीं, जिस दिन बोते आम ॥ १ ॥

क्षमा —डरता सन्त न दुष्ट से, पहन क्षमा का कोट ।
व्यर्थ कमठ की पीठ पर, काक—चचु की चोट ॥ २ ॥

दम —जो मन मुट्ठी में हुआ जीत लिया ससार ।
घिरा भूप शतरज का, सब सेना लाचार ॥ ३ ॥

अस्तेय —नित प्राणो का भय रहे, दुख प्रद चोरी बान ।
बूँद चुराई सीप ने, खोई अपनी जान ॥ ४ ॥

शौच —सत्य सलिल से शुद्ध हो, आत्मा और शरीर ।
झाड़ू से गृह, यत्न से, यथा निकेत समीर ॥ ५ ॥

इन्द्रियनिग्रह —इन्द्रिय वश से सुख मिले,जैसे नथा क्रमेल[1] ।
झुके इधर से उधर को, जो हो हाथ नकेल ॥ ६ ॥

धी —धी के बिना न जानते, बुरा भला नादान ।
पिक को वायस पालते, अपना बच्चा जान ॥ ७ ॥

विद्या —विद्या का सचय करो, सदा रहो तल्लीन ।
विहग बनाते घोंसला, एक एक तृण बीन ॥ ८ ॥

सत्य —सत्य वचन मुख से कहो, न तु बैठो चुपचाप ।
असली की समता करे, कहीं न नकली छाप ॥ ९ ॥

अक्रोध —तनका वैरी क्रोध है ले प्राणों को चाट ।
कीट नाश अपना करे, पूर पूर कर पाट ॥ १० ॥

---

१ ऊँट

चिता के फूल।

धूल म बिखरे अद्भुत फूल।
हुआ विधि कैसा हा! प्रतिकूल॥
माली ने ममता सब त्यागी।
वन मे छोड बना बैरागी॥
कौन वाटिका जली अभागी।
हुई हाय क्या भूल॥ १॥

काया लता यहाँ जेा झूली।
स्वय नष्ट होकर अब फूला॥
दशा विचित्र देख मति भूली।
छिदें हृदय में शूल॥ २॥

नीरस परिमल हीन पडे हैं।
जाने किस जी के टुकडे हैं॥
या जीते जी के रगडे हैं।
चला जान निर्मूल॥ ३॥

पुष्प नहीं ये मन बहलावें।
बडे बडो के दिल दहलावें॥
कभी हँसावें कभी रुलावें।
ये चिंता के फूल[1]॥ ४॥

---

१ ढर

नहीं पडे रहने पावेंगे।
वही पुन प्रेमी आवेंगे॥
बीन बीन कर पछतावेंगे।
अहो चिता के फूल॥ ५॥

सुमन चिह्न तज गया पुरजन[१]।
इनके अधिकारी प्रिय परिजन।
जलको करें समर्पण यह धन॥
जा सुरसरि के कूल॥ ६॥

अहो जगत सम्बन्ध निभाया।
निज हाथो से प्रथम जलाया॥
शेष रहा जो उसे बहाया।
सब विध कर उन्मूल॥ ७॥

१ जोव

कवि-कौतुक

बन के दिगबर से शब्द चुन अबर से,
मस्तक उदबर[1] से तक को उडाते ह।

ध्वनि की न धुन उन्ह व्यञ्जना की वासना न,
पिगल का पाश तोड मुक्तक बनाते ह॥

भारवाही भूषण के भार के बने न कभी,
दिल के फफोले फोड रस को बहाते ह।

खोजो काव्य-कानन में अर्थ कवि कौतुक को,
भाव का अभाव कर भाव को बढाते ह॥

* * *

समालोचक-समीक्षा

साहित्य सग्राम शूर सत्य समालोचक है,
सभ्यता-समत्त सैन्य-साथ अड जाते ह।

काल सा कराल रूप भूप निज मानस के,
अस्त्र-शस्त्र लेखनी के लेके लड जाते है॥

पिंड का छुडाना फिर पापडों का बेलना है,
पुस्तक पिशाचिनी के पीछे पड जाते हैं।

भूषण को त्याग सब दूषण बखेर देते,
विज्ञ खरदूषण के लत्त झड जाते है॥

* * * *

---

१ गूलर

सम्पादक-स्वत्व

देश के सुधारने का बीडा ये उठाते आप ,
अञ्जना के लाल मानो किम्बा गिरिधारी है ।
राई का पहाड कर घर घर फूँक देते ,
आपस के सगर मे व्यग के विहारी है ॥
कोषपाल-इन्द्र सम लोक में विराजते है ,
लेखक विचारे दान मान के भिखारी है ।
गोबर गनेश को दें गौरव गणश तुल्य ,
छापने न छापने के ये ही अधिकारी है ॥

मौत की घड़ी

सामने सदा खडी देखी ।
सभी पर नजर कडी देखी ॥
अधूरी आस पडी देखी ।
मौत की अजब घडी देखी ॥ १ ॥

जन्म ले जग मे जब आया ।
देखकर तुझ को घबडाया ॥
जोर से रोया चिल्लाया ।
काम पर एक नहीं आया ॥ २ ॥

बन्द तालों में जाता है ।
पहरुये भी बिठलाता है ॥
न तो भी कोई आता है ।
सब जगह तुझ को पाता है ॥ ३ ।

खेलने, खाने, सोने म ।
जागने, हसने, रोने में ॥
गलीचा और बिछोने में ।
महल के कोने कोने में ॥ ४ ॥
सिंह चीतो के जगल में ।
पहलवानो के दगल में ॥
तैरती तू अगाध जल में ।
दौडती विना रोक थल मे ॥ ५ ॥

गगन में तू मँडराती है ।
लहर पर तू लहराती है ॥
ध्वजा तेरी फहराती है ।
जहाँ देखो हहराती है ॥ ६ ॥

विज्जु बन बादल में दमके ।
गास बन गई हाथ यम के ॥
वज्र बन मघवा[1] कर चमके ।
रोग बन तन में आ धमके ॥ ७ ॥

चराचर जीव किये वश में ।
घूमती सब की नसनस में ॥
तुझे पाते हैं षट्-रस में ।
बुराई और विमल यश में ॥ ८ ॥

न छोडा डाँट रही सब को ।
छटाछट छाँट रही सब को ॥
कटाकट काट रही सब को ।
चटाचट चाट रही सबको ॥ ९ ॥

चील ऊपर मडराती है ।
भक्ष्य पर लक्ष्य लगाती है ॥
वधिक ने छेदी छाती है ।
सर्प से उसे डसाती है ॥ १० ॥

---

१ इन्द्र

मोर ने इधर नाग पकडा ।
लोमडी ने मयूर जकडा ॥
व्याध ने झपट उसे रगडा ।
स्वय गिर पडा मिटा झगडा ॥ ११ ॥

बडी जो मिहनत से पाले ।
दुधमुँहे जो भोले भाले ॥
हाय वे शिशु भी खा डाले ।
जान के पडे बडे लाले ॥ १२ ॥

अकेला लाने वाला है ।
घराना खाने वाला है ॥
किया तूने मुँह काला है ।
वहाँ जा डाका डाला है ॥ १३ ॥

चक्रवर्त्ती भी चकराये ।
छिपे दिग्विजयी भय खाये ॥
वैद्य धन्वतरि घबडाये ।
झुके तेरे सम्मुख आये ॥ १४ ॥

न तूने बाल वृद्ध छोडे ।
न तूने सती ऋृद्ध छोडे ॥
न तूने जन समृद्ध छोडे ।
न तूने गाय गृद्ध छोडे ॥ १५ ॥

न तूने योगी को छोडा ।
न तूने भोगी को छोडा ॥
न तूने रोगी को छोडा ।
नहीं उद्योगी को छोडा ॥ १६ ॥

अमर भी तुझे न मार सके ।
असुर भी तुझे न टार सके ॥
न सिर से तुझे उतार सके ।
भला फिर किससे हार सके ॥ १७ ॥

न तेरा तारतम्य टूटा ।
न कोई पजे से छूटा ॥
पडा है खाली घर खूटा ।
बना जिस ढब जग को लूटा ॥ १८ ॥

महा दिग्गज भी डरते है ।
वीर भी धीर न धरते है ॥
भीरु मर मर कर मरते हैं ।
याद तेरी जब करते है ॥ १९ ॥

नगर वीरान किये तूने ।
साफ मैदान किये तूने ॥
सभी हैरान किये तूने ।
काम क्या क्या न किये तूने ॥ २० ॥

न कुछ भी लेने देती है ।
न कुछ भी देने देती है ॥
अचानक आकर लेती है ।
अकेला सब को खेती है ॥ २१ ॥

पिता की आस वही बेटा ।
मातु की साँस वही बेटा ॥
आज पा त्रास वही बेटा ।
हो गया नाश वही बेटा ॥ २२ ॥

तडपती निज नारी छोडी ।
बिलखती महतारी छोडी ॥
पिता की पुचकारी छोडी ।
सर्वसन्तति क्यारी छोडी ॥ २३ ॥

महल की मुख्त्यारी छोडी ।
फौज की सरदारी छोडी ॥
हेम—हय—अम्बारी छोडी ।
राज लक्ष्मी सारी छोडी ॥ २४ ॥

मान धन खूब कमाया था ।
राजपद भी फिर पाया था ॥
भाग्य तारा चमकाया था ।
अचानक आन उठाया था ॥ २५ ॥

साँस जब तन की छोडी है।
आस तब मन की छोडी है॥
राशि सब धन की छोडी है।
प्रीति प्रियजन की छोडी है॥ २६॥

फूल फलते फलते जाते।
दिवस टलते टलते जाते॥
कोष खलते खलते जाते।
हाथ मलते मलते जाते॥ २७॥

धूप से पत्ती मुरझातीं।
कुसुम कलियाँ कल कुम्हलातीं॥
सूखती सब चीजे जातीं।
न तारावलि रहने पातीं॥ २८॥

दया भी हार मानती है।
तीव्र तलवार जानती है॥
सभी पर सदा तानती है।
अनोखी ठान ठानती है॥ २९॥

देख कर तेरी यह शैली।
लोक में घबडाहट फैली॥
भरी क्या अभी नहीं थैली।
बन्द कर मुँह की मनमैली॥ ३०॥

कोसती यह दुनिया सारी।
न मरती तोभी हत्यारी॥
चल बसे सारे नर नारी।
न आई तेरी ही बारी॥ ३१॥

रात दिन एड लगाती है।
भ्रमाती और भगाती है॥
एक से एक लडाती है।
अनोखे खेल खिलाती है॥ ३२॥

विश्व में यह प्रपच तेरा।
अगोचर सदा मच तेरा॥
बडा व्यवहार टच तेरा।
सोच में है विरञ्च तेरा॥ ३३॥

जागती रहे नहीं सोती।
कभी तू वैर बीज बोती॥
कभी सिर राजों के होती।
रक्त से सदा हाथ धोती॥ ३४॥

सहायक तेरे बहुतेरे।
घनेरे अनुयायी तेरे॥
सब जगह तेरे ही चेरे।
लगाते फिरते हैं फेरे॥ ३५॥

प्लेग तूने ही ला डाली।
किये हैजे से घर खाली॥
बनी कलकत्ते की काली।
रुधिर सब का पीने वाली॥ ३६॥

सदा निज-स्वत्व जमाती है।
तत्व से तत्व लडाती है॥
एक से पाँच गिराती है।
पाँच से एक भिडाती है॥ ३७॥

बिना आहट के आती है।
कल्पना के पुल ढाती है॥
चिरश्रम धूल मिलाती है।
लोरियाँ सुना सुलाती है॥ ३८॥

अग्नि में कभी नहीं जलती।
नीर मे कभी नहीं गलती॥
वायु के ऊपर तू चलती।
फूलती सदा, सदा फलती॥ ३९॥

निरन्तर तेरी चलती है।
मचलती और मसलती है॥
गटागट खूब निगलती है।
रूप धर सब को छलती है॥ ४०॥

न कोई नियत समय तेरा।
चला मन जब आकर घेरा॥
लगा तब पग पग पर डेरा।
फिराती सब को चकफेरा॥ ४१॥

निराले अस्त्र रहें तेरे।
निराले शस्त्र रहें तेरे॥
निराले वस्त्र रहें तेरे।
शिष्य सर्वत्र रहें तेरे॥ ४२॥

कहीं परतीति नहीं तेरी।
किसी पर प्रीति नहीं तेरी॥
नयी यह रीति नहीं तेरी।
कहाँ पर भीति नहीं तेरी॥ ४३

न कुछ बुनियाद कहीं तेरी।
न कुछ फरियाद कहीं तेरी॥
न कुछ मर्याद रही तेरी।
एक बस याद रही तेरी॥ ४४॥

जानते जड विनाश की है।
मगर तू त्राण त्रास की है॥
त्रास तू ही निराश की है।
कतरनी कठिन पाश की है॥ ४५॥

अरी आ तूझे बुलाता हूँ।
हाथ हँस हँस फैलाता हूँ॥

पास जब तुझ को पाता हूँ।
भेट तेरी हो जाता हूँ॥ ४६॥

फूलने का फल यही ससार में।

वाटिका मे जो कली थी खिल रही।
साथ सखियो के वहाँ हिल मिल रही॥

तोड के गूँथा उसे निज हार मे।
फूलने का फल यही ससार मे॥ १॥

शिग्रु[1] जो देता रहा अपनी फली।
मेटता था पेट की सब बेकली॥

मेदिनी पर गिर गया निज भार मे।
फूलने का फल यही ससार मे॥ २॥

पात पखो का पवन झलता रहा।
गैर भी जिस गैर स पलता रहा॥

काट केले को दिया निज प्यार मे।
फूलने का फल यही ससार में॥ ३॥

---

१ सँहजना

देख के वश वश जा फूला कहीं।
जानते बस वश बचने का नहीं॥
दी कुल्हाडी झट जमा आधार मे।
फूलने का फल यही ससार मे॥ ४॥

हाय! लाखो बिक गये बाजार मे।
कोटि कुचले हो गये आचार मे॥
खो गये हैं फूल की फुलवार मे।
फूलने का फल यही ससार मे॥ ५॥

कौन जन महिमा के अधिकारी ।

कौन जन महिमा के अधिकारी ?

"पापे जिन्हे न घृणा गर्व की कभी निन्द्य बीमारी ।
जो इन्द्रिय विषयो से बचकर रहें सदा ब्रह्मचारी ॥
कटु वादी प्रति रहे मौन जो क्षमा करे अपकारी ।
देवें दान दक्षिणा पर को बने न स्वय भिखारी ॥
प्राणिमात्र के प्रति दिखलावे जो उदारता भारी ।
श्रमी पिता की आशा है जो माता के मुद कारी ॥
जो ईर्ष्या से रहित अतिथि की करते सेवा प्यारी ।
वेदो के स्वाध्याय श्रवण मे श्रद्धा प्रेम प्रचारी ॥
रहे तपस्या निरत सदा जो मन क्रम वच अघ हारी ।
लोभ न जिन्हें बना सकता है अधी और अविचारी ॥
विचलित होवे नहीं सत्य से देख मृत्यु हत्यारी ।
पुण्य कार्य-रत सच्चे साधक जो है धर्माचारी ॥
जीवन दिव्य बनें पथ दर्शक प्रभु के भक्त पुजारी ।
वे ही सत्य निष्ठ 'विभु'-प्यारे महिमा के अधिकारी ॥

(सस्कृत स ।

शुभाशा।

अखिलेश अनन्त विधाता हो, मंगलमय मोक्ष प्रदाता हो।
भय भंजन शिव जनत्राता हो, अविनाशी अद्भुत ज्ञाता हो॥
तेरा ही एक सहारा हो।
हरि! हिद प्राण से प्यारा हो॥ १॥

सब को स्वतन्त्रता प्यारी हो, निज स्वत्व व सम्पत्ति सारी हो।
स्वाधीन सभी नर नारी हो, सब चार वर्ग अधिकारी हो॥
दासत्व देश से न्यारा हो।
हरि! हिद प्राण से प्यारा हो॥ २॥

अघ दम्भ दुर्नीति खल कूट न हो, षड्रिपु हिंसा दुख फूट न हो।
चोरी असत्य छल छूट न हो, हट द्वेष हलाहल घूट न हो॥
जीवन आदर्श हमारा हो।
हरि! हिद प्राण से प्यारा हो॥ ३॥

बलवीर्य पराक्रम त्वेष रहे, सद्धर्म धरा पर शेष रहे।
श्रुति भानु प्रकाशित देश रहे, धन ज्ञान कला युत देश रहे॥
सर्वत्र प्रेम की धारा हो।
हरि! हिद प्राण से प्यारा हो॥ ४॥

जल मे जलयान हमारा हो, थल मे कलयान हमारा हो।
आकाश विमान हमारा हा, सारा सामान हमारा हो॥

भारत सिरताज हमारा हा
हरि। हिद प्राण मे प्यारा हो॥ ५॥

भारत तन मन जन सारा हो उसकी सेवा सब द्वारा हो।
निज मान समान दुलारा हो, सब की आँखों का तारा हो॥

जीवन सर्वस्व हमारा हो।
हरि। हिद प्राण मे प्यारा हो॥ ६॥